आपने लिखा

शैक्षणिक संदर्भ अंक 92, मई-जून 2014 में प्रकाशित अनिल सिंह का आलेख 'शिक्षण में थिएटरः एक अनुभव' बेहद मर्मस्पर्शी और पठनीय रहा। बच्चों के लिए तरह-तरह की आवाज़ें, शारीरिक मुद्रा, भावमुद्रा, दृश्य संयोजन, वस्तुओं का रचनात्मक इस्तेमाल, त्वरित संवाद रचना, डायलॉग डिलेवरी आदि बिन्दु गम्भीरता से पढ़ने को प्रेरित करते हैं। इस आलेख को पढ़ने पर एक खूबसूरत बात निकलकर सामने आई कि शिक्षकों को पाठ्यक्रम की डिलेवरी में काफी ध्यान देना होगा। शिक्षक साथियों को ध्यान रखना होगा कि शिक्षा के माध्यम से जिस तरह सर्वांगीण विकास की परिकल्पना की जाती है, जिसके माध्यम से जीवन-आधारित कौशल का उपागम हमें थियेटर के माध्यम से दिखाई देता है, फलीभूत हो। अगर मैं अपनी शिक्षकीय जीवन की शैक्षणिक गतिविधियों की बात करूँ तो मैंने हिन्दी और पर्यावरण अध्ययन में नियमित कक्षा 1 से 10 तक थियेटर को प्रधानता देने की पुरज़ोर कोशिश की है। इसका व्यापक प्रभाव बच्चों की शिक्षण अभिरुचि और अधिगम पर स्पष्ट दिखाई देता है। बच्चों की अभिव्यक्ति क्षमता के लिए इस तरह की विधियों को प्रोत्साहन मिलना ही चाहिए क्योंकि मौलिक अभिव्यक्ति के विकास का आधार नाट्य कला भी हो सकती है। इस बेहतरीन आलेख के लिए अनिल जी को बधाई ।

'बचपन से...बचपन तक...' संघमित्रा आचार्य लिखित आलेख में एक तरह से बच्चों के लिए रचनात्मकता की स्वीकारोक्ति का अपनापन दिखाई देता है। इस आलेख में प्रतिक्रियाएँ और भागीदारी, अपनी मर्ज़ी से खींची तस्वीर, तस्वीरों की प्रदर्शनी, कुछ यादें, कुछ सवालों ने बच्चों को बच्चों की नज़र से देखने का मौका दिया। एनसीएफ 2005 के सन्दर्भों में भी देखें तो स्वतंत्र अभिव्यक्ति को बल दिया गया है। इस आधार पर विद्यालय तथा घर आज के स्वरूप में ठीक विपरीत चलते हुए दिखाई देते हैं। आज के इस दौर में जिस तरह की प्रैक्टिस दिखाई देती है इस पर हमें विचार करना ही होगा ताकि शिक्षा को गुणात्मक स्वरूप प्रदान करने के लिए रचनात्मक अभिव्यक्ति को शिक्षण विधियों में शामिल किया जा सके। इस आलेख के आधार पर एक बात और महत्वपूर्ण लगी कि महँगी चीज़ हमेशा बच्चों से दूर रखना चाहिए, इस आम समझ पर आलेख ने सवाल खड़ा किया है। 'शैक्षणिक संदर्भ' की पूरी टीम को हार्दिक बधाई।

नरेन्द्र साहू,
अज़ीम प्रेमजी फाउण्डेशन,
धमतरी, छत्तीसगढ़